तृतीय अध्याय

रामचरितमानस के चार संभाषण

अ) याज्ञवल्क्य और भरद्वाज संभाषण
ब) शिव और पार्वती संभाषण
क) काकभुशुण्डि और गरूड संभाषण
ड) तुलसी और संत संभाषण

अ) याज्ञवल्क्य और भरद्वाज संभाषण ।

तीसरा अध्याय

` रामचरितमानस ` के चार सोपान

गोस्वामी तुलसीदास भारतीय संस्कृति के परम निष्ठावान और उदात्त भावों से युक्त महाकवि थे। वे सगुणोपासक रामभक्त थे। उनका हृदय विशाल और दृष्टि व्यापक थी। संसार में हम देखते हैं कि अधिकतर व्यक्ति ऐसे होते हैं, जो जगत् प्रवाह के साथ बह जाते हैं। लेकिन तुलसीदास जैसे उच्च मनोवृत्ति के महापुरुषों का आविर्भाव समय के अनुसार हुआ करता है, जो प्रवाह पतित होकर उसमे बहते नहीं, अपितु जगत प्रवाह को अच्छी या उचित दिशा की और मोडने के लिए भगीरथ प्रयत्न करते हैं।

जिस-समय तुलसीदासजी का आविर्भाव हुआ था उस समय समाज में धार्मिक, राजनैतिक, आर्थिक संघर्ष के स्तर पर अनास्था और अवमूल्यन की स्थिति निर्माण हुयी थी। धार्मिक, आध्यात्मिक क्षेत्र में आडम्बर, बाह्याचार, तंत्र-मंत्र, जादू-टोने चमत्कार और व्यभिचारों का बोलबाला था। वर्णाश्रम व्यवस्था टूट रही थी। समाज में मर्यादा का ह्रास हो रहा था।

साहित्यकार या कवि अपने युग का मार्गदर्शक होता है। वह अपने युगीन समाज को दिशा बोध देता है तथा जीवन के मार्ग को कटु-विषम यथार्थताओं से परिचित कराता है। साथ-साथ आगे आनेवाली पीढियों को अपने युग का इतिहास सुनाता है। तुलसीदासजी भी भक्तिकाल के श्रेष्ठ कवि थे। उन्होंने समाज में होनेवाली चारित्रिक गिरावट को पहचाना और अध:पतन की और जानेवाले समाज को बचाने के लिए ` रामचरितमानस ` की रचना करके समाज के सामने राम को उपस्थित किया। तुलसीदासजी का ` रामचरितमानस ` जागरूक मन:स्थिति का प्रतीक है।

` रामचरितमानस ` का निर्माण विश्व की महान साहित्यिक घटना है। वह हिंदी साहित्य का सर्वोत्कृष्ट महाकाव्य है। उसकी रचना चैत्र शुक्ल नवमी मंगलवार सं. १६३१ में हुई थी। कवि ने इसकी रचना स्वान्त:सुख के लिए की थी, लेकिन तुलसीदासजी का अन्त:करण अपनी परिधि में संपूर्ण विश्व को समेटने की क्षमता रखता है। इसमें हमें स्वान्त:सुख के साथ-साथ जगत् के हित और कल्याण की भावना दिखाई देती है। मानवता के विकास की यह गाथा जटिलताओं, समस्याओं और चारित्रिक अध:पतन में आयी गिरावट से मार्ग निकालकर अपने लक्ष्य की प्राप्ति का द्वार खोलती है।

` रामचरितमानस ` एक श्रेष्ठ भक्तिकाव्य है। तुलसीदासजी ने अपने महाकाव्य का नाम ` रामचरितमानस ` बिना किसी मतलब से नहीं रखा था। उनकी इच्छा थी कि राम-चरित्र के मान सरोवर में नित्य स्नान करनेवाली भक्त जनता सही सामाजिक आचरणों को प्राप्त करके एक सुन्दर विषमता रहित, सब को समान रूप से ज्ञान एवं समृध्दता प्रदान करनेवाला सदाचारी, परोपकारी, स्वार्थ-लिप्सा से परे व्यक्तियों का समाज निर्माण करे। वे कहते हैं कि -

` सिव प्रसाद सुमति हिय हुलसी।
रामचरितमानस कवि तुलसी।
करइ मनोहर मति अनुहारी।
सुजन सुचित सुनि लेउ सुधारी।
सुमति भूमि थल हृदय अगाधू।
वेद पुरान उदधि घन साधू।
बरषहि राम सुजस बर बारी।
मधुर मनोहर मंगलकारी।
लीला सगुन जो कहहिं बखानी।
सोइ स्वच्छता करइमल हानी।। `[१]

तुलसीदासजी ने ` रामचरितमानस ` में राम का चरित्र गान करने के लिए या उसकी महिमा समाज के सामने प्रस्तुत करने के लिए संवादों की रचना की है।

मानस की संवाद योजना :

मानस की संवाद योजना को विश्वनाथ प्रसाद मिश्रजी दो भागों में विभाजित करते हैं - ' एक शृंखलाबध्द संवाद और दो उन्मुक्त संवाद । मूलकथा के वक्ता और श्रोता के संवाद शृंखलाबध्द है और कथा के भीतर पात्रबध्द संवाद उन्मुक्त है ।'[२] शृंखलाबध्द संवाद को हमे दूसरे शब्दों में पौराणिक संवाद कह सकते हैं । पौराणिक संवाद इसलिए कहते हैं कि श्रोता और वक्ता के प्रश्नोत्तर के रूप में कथा कहने की शैली प्राय: सभी पुराणों में और महाकाव्यों में हमें देखने को मिलती है । इसप्रकार मानस की भूमिका में दिखाई देनेवाले शिवपार्वती, याज्ञवल्क्य-भरद्वाज, काकभुशुण्डि और गरुड के संवादों को हम पौराणिक शैली के शृंखलाबध्द संवादों की सीमा में परिणत करेंगे । ' मानस धर्मग्रंथ भी है और काव्यग्रंथ भी है इसलिए उसमें पुराणों की तरह शृंखलाबध्द संवाद रखे गये हैं ।'[३] तुलसीदासजी ने रामचरितमानस की रचना के बारे में आरंभ में ही कहा है -

' नाना पुराण निगमागम सम्मतं यद ।'[४]

हम देखते हैं कि पौराणिक शैली के काव्यों में वक्ता और श्रोता की शृंखला दूर तक चलती है । जैसे संस्कृत रामायण की कथा सर्वप्रथम नारदजी ने महर्षि वाल्मीकि को सुनाई, वाल्मीकि ने लवकुश को सुनाई और लवकुश ने अश्वमेध यज्ञ के अवसर पर अवधवासियों को यह कथा गाकर सुनाई थी । उसी-प्रकार ' रामचरितमानस ' में भी हमें वक्ता-श्रोता की एक लम्बी शृंखला देखने को मिलती है । तुलसीदासजी केही शब्दों में -

' संभु कीन्ह यह चरित सुहावा । बहुरि कृपाह ं करि उमहि सुनावा ।
सोइ सिव काकभुशुंढिहि दीन्हा । रामभगत अधिकारी चीन्हा ।
तेहि सन जागबलिक पुनि पावा । तिन्ह पुनि भरद्वाज प्रति गावा ।
मैं पुनि निज गुरुस सन सुनी कथा सो सूकर खेत
समुझी नहिं तसि बालपन तब अति रहेऊँ अचेत । '[५]

इसप्रकार उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि मानस की प्रस्तावना में यह चार प्रमुख वक्ता और श्रोताओं के संवादों का संगुफन पौराणिक शैलीपर ही आधारीत है ।

मानस में निम्नलिखित चार वक्ता और श्रोता आए हैं -

वक्ता		श्रोता
१. याज्ञवल्क्य	-	भरद्वाज
२. शिव	-	पार्वती
३. काकभुशुण्डि	-	गरूड
४. तुलसी	-	सन्त या सज्जन

पौराणिक संवादों का संगुम्फनत्व :

` मानस ` के पौराणिक संवादों की रचना उसके चार प्रमुख वक्ता श्रोताओं की पारस्परिक संवेदना से निर्मिती है । इन चार संवादों के बारेमें डॉ. राजकुमार पाण्डेय ने लिखा है - ` इन चार वक्ता-श्रोताओं में से काकभुशुण्डि ने गरूड के प्रति, शिवजी ने उमा के प्रति, याज्ञवल्क्य ने भरद्वाज के प्रति और गोस्वामी तुलसीदासजी ने समस्त सज्जनों के प्रति रामकथा का निवेदन किया है । `[६]

गोस्वामी तुलसीदासजी का कहना है कि जिस कथा को याज्ञवल्क्य ने भरद्वाज के प्रति कहा है उसी को उन दोनों के संवाद के रूप में कहा है । दूसरी ओर परम विवेकी याज्ञवल्क्यजी भरद्वाज के मुख से कुछ संशयात्मक बातें सुनकर भूमिका के रूप में पहले तो यह कहते हैं कि इसप्रकार का सन्देह एक-बार उमा ने भी शिव से किया था । अत: शिवजी ने उनसे यह रामकथा सुनायी

थी। मैं भी उसी उमा-महेश्वर संवाद को सुनाने जा रहा हूँ। जिसे सुनकर विषाद मिट जाता है।

" कहऊँ सो मति अनुहारि अब उमा संभु संवाद
जेहि हेतु जेहि सुनु मुनि मिटिहि विषाद ।। "[७]

उधर शिवजी ने उमा के प्रति इस कथा को कहना आरम्भ किया तो उन्होंने इतना और जोड दिया कि वह कथा काकभुशुण्डिजी ने गरुड से कही थी। उन्होंने गरुड के बारेमें भी कहा कि उसने भी उमा की भाँति प्रश्न किया था। मैं उस प्रसंग को कह रहा हूँ -

" सुनु सुभ कथा भवानि रामचरितमानस बिमल।
कहा भुसुंडि बखानि सुना बिहग नायक गरुड ।। "[८]

इसप्रकार इन संवादों के द्वारा यह स्पष्ट होता है कि विभिन्न संवादों में विस्तार पानेवाली रामकथा एक ही है। शिवजी ने उसे काकभुशुण्डि-गरुड संवाद से तथा गोस्वामीजी ने उसे याज्ञवल्क्य एवं भरद्वाज संवाद के आधार पर ग्रहण कर सकल सज्जनों को सुनाया है। इससे स्पष्ट है कि - काकभुशुण्डि एवं गरुड संवाद की नींव पर ही शेष तीनों संवादों का महल खडा हुआ है।

पौराणिक संवादों की इस संक्षिप्त विवेचना के आधार पर अब हमें यह कहनेमें कोई संकोच नहीं होगा कि यह सम्पूर्ण संवाद एक ही रामकथा को संशय और राम-भक्ति के प्रचार के आधार पर सुदृढ शृंखला में सुगुम्फित किया है। पौराणिक संवादों का यह कलात्मक सुगुंफन तुलसीदासजी की सफलता का निर्देश करता है।

` मानस ` के चार संवाद या धाट -

गोस्वामी तुलसीदासजी ने ` रामचरितमानस ` के प्रारंभ में रामकथा का ` मानस ` के साथ सुन्दर रूपक बाँधा है। रामचरित्रूपी उस मानस सरोवर में भरे हुए राम-जल का वर्णन करने के बाद कवि ने उसके चार धाटों का उल्लेख किया हैं -

` सुठि संवाद बर बिरचे बुद्धि बिचारि।
तेहि एहि पावन सुभग मनोहर धाट चारि ।। `[९]

डॉ. रामबाबू शर्मा कहते हैं कि - ` ये चार धाट ` रामचरित-मानस ` में रखे गये चार वक्ता और श्रोताओं के जोडे हैं। ये धाट कथावस्तु की सीमा का निर्धारण करते हैं। ` मानस` सरोवर के सौंदर्य और उसकी भव्यता में वृध्दि करते हैं। महाकाव्य की दीर्घता के इस विशाल आयोजन में नीरसता नहीं आने देते। ये धाट वर्णनों की स्वाभाविकता की रक्षा करते हैं। वर्णनों की निरन्तरता जब भ्रमकारक प्रतीत होने लगती है तब ये धाट साँस लेने का अवसर प्रदान करते हैं। जब कोई गूढ कथन उपस्थित हो जाता है तब हमारा ध्यान उस ओर आकर्षित करते हैं। `[१०]

ये चार धाट इसप्रकार है -

प्रथम धाट याज्ञवल्क्य और भरद्वाज संवाद का है। इसे ` दक्षिण धाट ` कहा है। इस संवाद में कर्मकाण्ड का निरूपण हुआ है इसलिए इन्हें ` कर्मधाट ` भी कहा जाता है।

दूसरा धाट शिव और पार्वती संवाद का है। इसे ` पश्चिम धाट` कहा जाता है। इसमें हमें ज्ञान का प्रतिपादन मिलता है। इसलिए इस धाट को ` ज्ञान धाट ` भी कहते हैं।

तीसरा घाट काकभुशुण्डि और गरूड संवाद का है। इसे ` उत्तर घाट ` कहा जाता है। इसमें भक्ति की महिमा बताई है इसलिए इस घाट को ` भक्तिघाट ` कहा जाता है।

चौथा घाट तुलसीदास और संत या सज्जन के संवाद का है। इसे ` पूर्व घाट ` कहते हैं। इसमें दीनता का प्रतिपादन हुआ है इसलिए इसे ` दैन्य घाट ` कहा जाता है।

डॉ. स्वामीनाथ शर्मा का यह मत है - ` इन चार घाट या चार दार्शनिक सिध्दान्तों का अद्वैत, विशिष्टाद्वैत, शुध्दाद्वैत और द्वैताद्वैत का प्रतिपादन करना ही उद्देश्य है। `[११]

तुलसीदासजी ने ` रामचरितमानस ` की उपमा मौगोलिक मानस सरोवर से दी है। यह रूपक बहुत ही सुंदर और पूर्ण विशद और समर्पक है। रूपक को छोडकर जब हम कथा भागपर आते हैं, तब वक्ताओं के अनुभव आराधना और इष्ट के रूप में ` रचमचरितमानस ` के चार घाट मिलते हैं।

आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्रजी का कहना है - ` गरूड, पार्वती और भरद्वाज इन तीनों श्रोताओं को दाशरथि राम के ईश्वरावतार होने में संदेह है। वक्ताओं ने इसी सन्देह का निराकरण किया है। `[१२]

संवादों को पढने पर यह लक्षित होता है कि एक ही कथा प्रत्येक संवाद में चल रही है और उसमें ज्ञान, कर्म और भक्ति का निरूपण हुआ है।

तुलसीदासजी ने ` रामचरितमानस ` के इन चार संवादों की विविधता को लक्षित करने के लिए श्रोताओं का संबोधन देकर वक्ताओं की पध्दति का ध्यान रखा है। जैसे याज्ञवल्क्य के द्वारा जहाँ भरद्वाज संबोधन है वहाँ कर्मकाण्ड की प्रधानता लक्षित होती है। उदा.

` मरद्वाज सुनु जाहि जब होइ विधाता बाम ।
धूरि मेरु सम जनक जम ताहि ब्यालसम दाम ।। `[१३]

शिव के द्वारा जहाँ उमा, गिरिजा आदि संबोधन है वहाँ ज्ञान की प्रधानता दिखाई देती है जैसे -

` निसिचर अधम मलकर ताहि दीन्ह निजधाम ।
गिरिजा ते नर मंदमति जे भजहि श्रीराम ।। `[१४]

काकभुशुण्डि के द्वारा जहाँ खगेश, उरगारि यह संबोधन है वहाँ उपासना या भक्ति का निरूपण मिलता है जैसे -

` सुनु खगेस प्रभु के यह बानी ।
अति अगाध जानहि मुनि ग्यानी ।। `[१५]

तुलसीदासजी के द्वारा जहाँ संत का संबोधन हैं वहाँ दैन्य की प्रधानता है जैसे -

` संत हृदय नवनीत समाना कहा कबिन्ह परि कहैन्न जाना ।
निज सकल पुरान वेद कर कहेऊँ तात जानहिं कोबिद नरा `[१६]

इसप्रकार ` मानस ` के इन चार संवादों में वक्ता-श्रोता के प्रश्नोत्तर को हम प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष माने तो ये चार संवाद रामकथा की धारा में ऐसे मिलकर एक हो गए हैं जैसे प्रधान नदी की धारा में सहायक नादियाँ ।

इसप्रकार ` गोस्वामी तुलसीदासजी ने ` रामचरितमानस ` के ये चार संवाद रामकथा रूपि जल तक पहुँचने के लिए चार घाट है । कथा मन्दिर में प्रवेश करने के लिए विभिन्न चतुर्दिक सुन्दर द्वार हैं और कथारूपि स्थान तक लेजाने के लिए प्रशस्त चार राजमार्ग है ।`[१७]

मानस के चार संभाषण के चार वर्ग :
(देवता, मुनि, पक्षी और मनुष्य)

तुलसीदासजी ने ' रामचरितमानस ' के चार संभाषणों द्वारा रामकथा को कहने के लिए भक्तों के चार वर्ग बना दिये हैं। ये वर्ग इसप्रकार हैं - देवता, मुनि, पक्षी और मनुष्य। याज्ञवल्क्य-भरद्वाज मुनि हैं। शिव और पार्वती देवता हैं। काकभुशुण्डि और गरुड पक्षीयोनि के हैं। तुलसीदास और संत मनुष्य योनि के हैं।

तुलसीदासजी ने अपने ' रामचरितमानस ' के मूल रचयिता के रूप में शिवजी को प्रस्तुत किया है। अन्य वक्ताओं को या श्रोताओं को शिवजी से ही कथा की प्राप्ति हुई है।

डॉ. स्वामीनाथ शर्मा ने तुलसीदासजी के इन चार संवादों के पात्रों के दो वर्ग बनाये हैं - " एक देव वर्ग और दूसरा मानव वर्ग। देव वर्ग में आदि देव महादेव एवं आदि भक्त काकभुशुण्डि वक्ता हैं और आदिशक्ति पार्वती तथा विष्णु के वाहन गरुड श्रोता हैं। मानव वर्ग में परमज्ञानी याज्ञवल्क्य एवं तुलसीदासजी वक्ता हैं, तो मुनिवर भरद्वाज एवं सज्जन-गण या संत श्रोता है। देव वर्ग की कथा क्रमश: कैलास पर्वत एवं सुमेर गिरि पर चलती है, तो मनुष्य वर्ग की कथा तीर्थराज प्रयाग और यत्र-तत्र सर्वत्र चलती है।"[१८] जैसे उदा. -

" प्रनवऊँ सोइ कृपाल रघुनाथा। बरनऊँ बिसद तासु गुन गाथा।
परम रम्य गिरिबर कैलासू। सदा जहाँ सिव उमा निवासू।।"[१९]

" गिरि सुमेर उत्तर दिसि दूरी। नील सैल एक सुंदर भूरी।
तेहिं गिरि रुचिर बसइ खगसोई। तासु नास कल्पांत न होई।।"[२०]

" तहाँ होइ मुनि रिषय समाजा। जाहि जे मज्जन तीरथ राजा।
मज्जहिं प्रात समेत उछाहा। कहहिं परसपर हरि गुन गाहा।।"[२१]

उपर्युक्त कथन से यह लक्षित होता है कि तुलसीजी यह कहना चाहते हैं कि एक ओर उन्होंने पार्वती और भरद्वाज को राम के ईश्वरावतार के बारे में होनेवाले संशय को मिटाने के लिए शिवजी और याज्ञवल्क्यजी इन वक्ताओं के द्वारा रामकथा की व्याप्ति कैलास से प्रयाग तक निर्विवाद रूप से मान्य और ग्राह्य बनाई है, तो दूसरी ओर पार्वती और भरद्वाज जैसों को भी संदेह हो सकता है, फिर हम जैसे मायाधीन लोगों का क्या कहना?। इसप्रकार तुलसीदासजी ने एक ओर राम के परब्रह्मत्व की पुष्टि और दूसरी ओर राममक्ति के प्रचार का भी सबल प्रतिपादन किया है। उन्होंने श्रोताओं एवं वक्ताओं की प्रकृति के अनुसार हिन्दु धर्म और हिन्दुओं की मान्यताओं को भी व्यक्त किया है, जिससे समाज में सदाचार और मक्ति की नींव मजबूत होती है।

डॉ.सुधाकर पाण्डेय के मतानुसार चारों संवाद चार भिन्न दिशाओं का प्रतिनिधित्व करते हैं - ` याज्ञवल्क्य और भरद्वाज मुनियों का प्रतिनिधित्व करते हैं। शिव-पार्वती ` देवताओं का, प्रतिनिधित्व करते हैं तो काकभुशुण्डि और गरुड, पक्षी योनि का प्रतिनिधित्व करते हैं और तुलसी और संत या सज्जन मनुष्य योनि के प्रतिनिधि हैं। `[२२]

तुलसीदासजी ने श्रोताओं की वैयक्तिक योग्यताओं तथा वक्ताओं के साथ-साथ उनमें सामाजिक संबंधों के अनुसार शंका समाधान की पद्धतियों को अपनाया है। भरद्वाज जैसे श्रोताओं को प्रबोध देने के निमित्त याज्ञवल्क्य के कथन में स्वभावत: हिन्दू समाज के सदाचार एवं कर्मकाण्ड का वर्णन अधिक हो गया है। इसके विपरीत पार्वती के समाधान में दाम्पत्य भाव का रहस्य छिपा है। यह नहीं कि श्रोताओं में शंकाओं की कोटि के अनुसार समाधान की शैली में भी वैभिन्नता आ गयी है। भरद्वाज की शंका सरल थी, किन्तु पार्वती की शंका गूढ। क्यों ? और कैसे ? इसप्रकार की थी। अत: यहाँ वक्ता ने तर्कशैली अपनायी है। यहाँ ` ज्ञानकाण्ड ` है। काकभुशुण्डि के संवाद का लक्ष्य एवं

शैली दोनों में पूर्व संवाद से भिन्नता है। यहाँ वक्ता-श्रोता के संबंध भी दूसरे ढंग के हैं। इसी से न तो यहाँ याज्ञवल्क्य की बात है न शिव विषयक निरूपण की ही। यहाँ तो निजी अनुभूति का वर्णन है। तुलसी के श्रोता सज्जन हैं, अत: यहाँ दैन्य भक्ति का प्रलोभन अधिक दिखाई देता है। इसप्रकार मानस में कर्मकाण्ड, भक्तिकाण्ड, ज्ञानकाण्ड और उपासनाकाण्ड आदि के द्वारा व्यवस्थित निरूपण के कारण ग्रंथ के उद्देश्य के बारेमें हमें संदेह नहीं रह जाता।

डॉ. स्वामीनाथ शर्मा कहते हैं कि - ' इन चार वर्गोंके माध्यम से एक-एक वर्ग के अंतर्गत जातिगत साम्य दिखाकर - ' परिवर्तन आकर्षण की जान होती है। इस उक्ति को साध्य किया है। उन्होंने इसी के आधार पर ही एक रामकथा को चार वक्ताओं के माध्यम से कहकर पाठकों का ध्यान उसकी ओर आकर्षित किया है।'[२३] अत: ये चार साधकों की भक्ति के चारों प्रवाह अंत में एक ही रामोपासना में तुलसीदास ने विलीन कर दिये हैं।

कर्म, ज्ञान और भक्ति :

तुलसीदासजी ने ' रामचरितमानस ' में राम का चरित्रगान करने के लिए चार संभाषणों के अंतर्गत अलग-अलग पध्दतियों को अपनाया है। वह पध्दति है - कर्म, ज्ञान और भक्ति।

कर्म, ज्ञान, और उपासना या भक्ति ये तीनों तत्व जन-समाज की स्थिति के लिए बहुत ही प्राचीन काल से भारत में प्रतिष्ठित हैं। मानव-जीवन की पूर्णता इन तीनों के मेल के बिना नहीं हो सकती। पर देशकाल के अनुसार कभी किसी तत्व की प्रधानता रही तो कभी किसी की। यह प्रधानता लोक में जब इतनी प्रबल हो जाती है कि दूसरे तत्व की ओर लोगों का ध्यान ही नहीं जाता तब साध्य स्थापित करने के लिए शेष तत्वों की ओर जनता को आकर्षित करने के लिए कोई-न-कोई महात्मा उठ खडा होता है। तुलसीदासजी भी भारत भूमि पर ऐसे ही महात्मा के रूप में उठ खडे हुए थे।

डॉ. अम्बाप्रसाद सुमनजी कहते हैं कि - ` जीवन की समग्रता के लिए ज्ञान, भक्ति और कर्म इन तीनों की आवश्यकता है। ज्ञान को वे बिना भक्ति के शुष्क मानते हैं या स्काकी मानते हैं और भक्ति को बिना कर्म के पैंगू मानते हैं। `[२४]

तुलसीदासजी ने भी कर्म, ज्ञान और भक्ति में साम्य दिखाने के लिए संवादों में याज्ञवल्क्य के द्वारा कर्म की प्रबलता को दिखाकर, शिवजी द्वारा ज्ञान की ओर लोगों को प्रवृत्त किया। इन दोनों की प्रबलता के कारण इधर समाज में धर्म में भक्ति या उपासना का अभाव दिखाकर साधारण जनता की तृप्ति के लिए काकभुशुण्डि की निर्मिति करके भक्ति को व्यक्त किया। इस-प्रकार इन्हीं तीन तत्वों को लेकर सामंजस्य स्थापित करके गोस्वामी तुलसीदासजी की आत्मा ने उस समय भारतीय जनमानस के बीच अपनी ज्योति जगाई।

अत: तुलसीदासजी ने ` रामचरितमानस ` के चार संवाद - याज्ञवल्क्य-भरद्वाज, शिव और पार्वती, काकभुशुण्डि-गरुड और तुलसी-संत या सज्जन इन्हीं के द्वारा कर्म, ज्ञान, और भक्ति को किसप्रकार प्रस्तुत किया है यह एक-एक संवाद को लेकर आगे प्रस्तुत किया जा रहा है।

<u>याज्ञवल्क्य और भरद्वाज संवाद</u> :

` रामचरितमानस ` के चार संवादों में से याज्ञवल्क्य और भरद्वाज संवाद ` दक्षिण धाट ` का प्रतीक है। इसमें ` कर्मकाण्ड ` का निरूपण हुआ है। इस संवाद में देवी, देवता, गो, तीर्थ, संत आदि सभी की प्रशंसा की गई है। जिनके प्रति हिंदू-समाज पूज्य-बुध्दि रखता चला आया है। ` रामचरितमानस ` में जहाँ कर्मकाण्ड का निरूपण हुआ है। वहाँ याज्ञवल्क्य भरद्वाज संवाद समझना चाहिए। इस संवाद की सभी उक्तियाँ कर्मकाण्ड को ही सिध्द करती है।

इस संवाद के वक्ता परमज्ञानी याज्ञवल्क्यजी हैं और श्रोता भरद्वाज हैं। भरद्वाज मुनि प्रयाग में रहते हैं। उनका आश्रम बहुत ही पवित्र, परमरमणीय और श्रेष्ठ मुनियोंको मानेवाला है। इसलिए ऋषि-मुनि भरद्वाजजी के आश्रम में तीर्थराज प्रयाग में स्नान करने के उद्देश्य से आकर वहाँ ब्रम्ह निरूपण धर्म की विधि, तत्व निरूपण, ज्ञान, वैराग्य की चर्चा के साथ-साथ भगवान की महिमा का भी गान करते हैं।

भरद्वाजजी का श्रीराम जी के चरणों में अत्यन्त प्रेम है। वे तपस्वी, जितेंद्रिय, दया के विधान और परमार्थ मार्ग में बडे ही चतुर हैं।

माघ में जब सूर्य मकर राशि पर जाता है, तब सब लोग तीर्थराज प्रयाग आते हैं। इसप्रकार माघ के महिने भर यही कार्यक्रम चलता रहता है। ऐसे ही एक बार मकर संक्रान्ति के अवसर पर परम विवेकी याज्ञवल्क्यजी वहाँ प्रयाग स्नान करने के उद्देश्य से आते हैं। तब भरद्वाज अपने आश्रम में उनका उचित स्वागत सत्कार कर के आसन देते हैं। याज्ञवल्क्यजी वेदतत्व के ज्ञाता है। इसलिए भरद्वाजजी उनके सम्मुख अपनी शंका उपस्थित करते हैं - उनका संदेह है - राम कौन है ? एक राम तो वह है, जो अयोध्या के राजा दशरथ के पुत्र थे, जिनका चरित्र संसार जानता है। जिन्हें अपनी पत्नी का वियोग सहना पडा था। और जिन्होंने युध्द में रावण को मारा था। क्या यह राम वही है, जिन्हें शंकरजी जपते हैं, या कोई दूसरे है ? तब याज्ञवल्क्यजी मुस्कराकर बोले -

" जागबलिक बोले मुसुकाई। तुम्हहि बिदित रघुपति प्रभुताई।
रामभगत तुम्ह मन क्रम बानी। चतुराई तुम्हारि मैं जानी।
चाहउँ सुने राम गुन गूढा। कीन्हिहु प्रस्न मनहुँ अति मूढा ।।"[२५]

इस शंका के समाधान के लिए मुनि याज्ञवल्क्जी, शिव-पार्वती संवाद की पृष्ठभूमि के रूप में शिव के सम्बन्धित चरित्र का गान करते हैं और उसके साथ रामभक्त शिवजी का महत्व स्पष्ट करते हैं -

एकबार त्रेतायुग में शिवजी-सती के साथ अगस्त्य ऋषि के पास गये थे। ऋषी ने जगत् के ईश्वर को जानकर उनका पूजन किया। तब अगस्त्यजी ने रामकथा शिवजी को कही, उसके बाद शिवजी और सतीजी कैलास को चले गये।

उन्हीं दिनों श्रीहरि ने रघुवंश में अवतार लिया था। वे अविनाशी भगवान उस समय पिता के वचन से राज्य-त्याग करके दण्डक वन में विचर रहे थे। ऐसे ही समय शिवजी राम का दर्शन लेना चाहते हैं लेकिन उन्हें राम के गुप्त अवतार का भेद खुलने का डर था। परंतु दर्शन के लोभ से उनके नेत्र ललचा रहे थे।

इधर रावण ने अपनी मृत्यु मनुष्य के हाथ से ब्रम्हाजी के पास माँगी। प्रभु राम ब्रम्हाजी के वचनों को सत्य करना चाहते थे। ऐसी चिंता में शिवजी अस्वस्थ थे। उसीसमय नीच रावण ने मारीच को कपट मृग बनाकर सीता के द्वारा राम को मृग की ओर भिजवाया और सीता को हर लिया। तब रघुनाथजी मनुष्य के समान विरह व्याकुल हो रहे थे। दोनों भाई सीता को खोजने के लिए वन में घूम रहे थे। तब याज्ञबल्क्यजी कहते हैं -

" अति बिचित्र रघुपति चरित जानहि परम सुजान।
जे मति मंद बिमोह बस हृदय धरहि कछु आन ।। "[२६]

ऐसे ही अवसर पर शिवजी ने राम को देखकर जगत् को पवित्र करनेवाले सच्चिदानन्द की जय हो। ऐसा कहकर शिवजी और सतीजी चल पडे। तब सतीजी के मन में सन्देह उत्पन्न हो गया कि, शिवजी की सारा जगत् वंदना करता है और उन्होंने एक राजपुत्र को सच्चिदानंन्द परमधाम कहकर प्रणाम किया। तब शिवजी ने उनके सन्देह को जान लिया और सती को कहा कि अगस्त्य मुनि ने जिस कथा का गान किया था और मैंने उनकी भक्ति सुनायी थी ये वही मेरे इष्टदेव रघुवीरजी हैं। जिनकी सेवा ज्ञानी-मुनि सदा किया करते हैं तथा वेद पुराण शास्त्र भी उनकी कीर्ति गाते हैं ऐसे सर्व व्यापक

ब्रहमाण्डों के स्वामी भगवान श्रीरामजी ने अपने भक्तों के हित के लिए, रघुकुल में अवतार लिया है ।

इसप्रकार बहुत बार समझाकर भी सती का संदेह समाप्त नहीं हुआ तब शिवजी ने उसे परीक्षा लेने के लिए कहा । वे जान गये कि इसमें सती का अहित ही होगा । राम ने जो रचा है वही होगा । सतीजी इधर सीता का रूप लेकर राम के रास्ते में आगे-आगे चलने लगी । राम ने सती के कपट को जान लिया । उसने सती को प्रणाम किया । पितासहित अपना नाम बताया और कहा कि वृषकेतु शिवजी कहाँ है ? आप यहाँ वन में अकेली किस लिए घूम रही हैं ?

श्रीरामजी के कोमल और रहस्य भरे वचन सुनकर सतीजी को बडा संकोच हुआ । वह डरती हुअी शिवजी के पास चली गयी । श्रीराम ने जान लिया कि सतीजी दु:खी हुई है तब उन्होंने रास्ते में उसे यह चमत्कार दिखाया कि उसे सभी ओर सीताजी सहित राम-लक्ष्मण दिखाई देने लगे । सीताजी को उससमय इसलिए दिखाया कि वह राम के सच्चिदानंद रूप को देखे । सती ने यह भी देखा कि सभी देवता शिव, विष्णु, लक्ष्मी और बाकी सभी शक्तियाँ राम की पूजा कर रहे हैं । यह देखकर वह डर गयी और उसने अपनी आँखें बंद कर दीं । थोडी ही देर में आँखें खोलने पर उसे वहाँ कुछ भी नहीं दिखाई दिया तब बार-बार रामजी के चरणों में सिर नवाकर वह शिवजी के पास चली गयी ।

शिवजी ने सती को कैसी परीक्षा ली ? ऐसा प्रश्न किया तब वह झूठ बोली, लेकिन, अंतर्यामी, शिवजी ने सब जान लिया । सती ने सीता का रूप लिया था यह जानकर वे बहुत ही दु:खी हो गये और उन्हें संताप भी आया । उन्होंने यह निर्णय लिया कि सती को इस शरीर से मेरी भेंट नहीं हो सकती ।

श्रीराम को प्रणाम करके वे कैलास को चले गये तब आकाशवाणी हुअी कि महेश, आपकी जय हो, आपने भक्ति का अच्छा पालन किया है। इस आकाशवाणी को सुनकर सतीजी के मन में चिंता हुअी। उसने शिवजीसे पूछा कि हे कृपालू आपने कौनसी प्रतिज्ञा की है लेकिन शिवजी ने कुछ नहीं कहा। तब सती ने जान लिया कि शिवजी सब समझ गये, स्त्री स्वभाव से ही मूर्ख और बेसमझ होती है। तुलसीदासजी कहते हैं -

" जल पय सरिस बिकाइ देखहु प्रीति कि रीति भलि।
बिलग होइ रसु आइ कमट खटाई परत पुनि।।"[२७]

इसप्रकार अपनी करनी को याद करके वह बहुत दु:खी हुई और वह जान गयी कि शिवजी ने मेरा त्याग किया है। मैने रघुनाथजी का अपमान किया और फिर पति के वचनों को झूठ माना उसका फल विधाता ने मुझे दे दिया। वह राम को स्मरण करने लगी कि हे प्रभु, आप तो दीन-दयालु हैं, दु:खों को हरनेवाले हैं। मैं हाथ जोडकर यह बिनती करती हूँ कि, मेरी यह देह जल्द ही छूट जाय। यदि मेरा शिवजी के चरणों में प्रेम है और मेरा यह व्रत मन, वचन और कर्म से सत्य है, तो मेरी मृत्यु जलद ही आ जाय। रघुनाथजी की कृपा से यहाँ दक्ष ने यज्ञ के लिए सभी देवताओं को आमंत्रित किया था लेकिन शिवजी को आमंत्रित नहीं किया था। तो भी सती ने शिवजी की बात को न मानकर वह गुणों के साथ दक्ष के पास गयी। वहाँ किसी ने भी उसका स्वागत नहीं किया। उल्टे सतीजी को देखकर दक्ष प्रजापति क्रोधित हुए।

सतीने सभा में जाकर देखा तो शिवजी के लिए आसन की व्यवस्था नहीं दिखाई दी तब वह अपने दु:ख से भी ज्यादा अपने पति के अपमान की पीडा से बहुत ही दु:खी हो गयी। इसलिए उसने अग्नि-प्रवेश किया।

अग्निप्रवेश करते समय सती ने यह वर माँगलिया कि हर जनम-जनम में शिवजी के चरणों में मेरा अनुराग रहे। इसी कारण सती ने हिमाचल के घर जाकर पार्वती के शरीर से जन्म लिया। यह सब समाचार नारदजी जान गये, तो वे हिमाचल के घर गये। तब नारदजी का स्वागत करके हिमाचल और मैना ने अपनी कन्या के दोष-गुण के लिए कहा। नारदजी ने पार्वती को गुणों की खान, स्वभाव से सुन्दर, सुशील समझदार ऐसा वर्णन किया। अम्बिका, उमा और भवानी यह उसके नाम बताये और उसे तुम्हारा सुहाग सदा अचल रहेगा ऐसा कहा।

उसके बाद कन्या को सुलच्छनी कहकर इसमें यो चार अवगुण हैं - इसे गुणहीन, मानहीन, माता-पिता विहीन, उदासीन, संशयहीन, योगी, जटाधारी, निष्कामहृदय, अमंगल वेषवाला ऐसा पति मिलेगा। तब माता-पिता बहुत ही दु:खी हो गये लेकिन पार्वती प्रसन्न हो गई। इसपर पर्वतराज ने नारदजी से उपाय पूछा तो उन्होंने कहा कि ये सभी गुण शिवजी में मिलते हैं और उसे शिवजी का तप करने के लिए कहो। तब शिवजी के साथ उसका विवाह हो जायेगा और दोष-गुण बन जायेंगे। यह कहकर नारदजी ब्रह्मलोक को चले गये।

इस बात पर मैना को बहुत दु:ख हुआ। लेकिन पर्वतराज ने उसे समझाया कि शिवजी सभी तरह से निष्कलंक हैं तुम संदेह को छोड दो। मैना पार्वती के पास चली गयी तब पार्वती ने उसे अपना स्वप्न कह दिया तब माता-पिता दोनों भी आनंदीत हो गयी। तप के ही बल से ही शेषजी पृथ्वी का भार धारण करते है। यह जानकर पार्वती तप करने लगी। तीन हजार वर्ष सूखे बेलपत्र खाये। इसप्रकार इसका कठोर तप देखकर आकाश से ब्रह्मवाणी हुई कि हे पर्वत कुमारी, तेरा मनोरथ सफल हुआ। अब सारे क्लेशों को त्याग दे। अब तुझे शिवजी मिलेंगे। अब पिता के बुलानेपर घर जाना। इस वाणी से वह बहुत ही खुश हो गयी। याज्ञवल्क्यजी कहते हैं कि -

" सुनत गिरा बिधि गगन बखानि । पुलक गात गिरिजा हरषानि ।
उमा-चरित सुंदर मैं गावा । सुनहु संभुकर चरित सुहावा ।।"[२८]

इधर जब सती ने शरीर त्याग दिया था तब से शिवजी के मन में वैराग्य हो गया । वे सदा रामचंद्रजी का नाम जपने लगे । शिवजी के कठोर नियम, अनन्य प्रेम को रामचंद्रजी ने देखा और और उन्हें समझाया और पार्वती के जन्म की कथा कहकर उसकी पवित्र करनी का वर्णन किया । राम ने शिवजी से पार्वती के साथ विवाह करने को कहा और शिवजी ने भी उसे स्वीकारा । तब शिवजी के पास सप्तर्षी गये उनको पार्वती की परीक्षा लेने के लिए भेजा । सप्तर्षी पार्वती के पास आकर कहने लगे कि नारद ने किसका अच्छा किया है ? हम तुम्हें शिवजी से अच्छा वर दे देंगे तब पार्वती कहती है -

" सत्य कहे हु गिरिभव तनु एहा । हठ न छूट छूटै बरु देहा ।
कनक पुनि पाषान ते होई । जारे हूँ सहज न परिहर सोई ।।"[२९]

इसप्रकार पार्वती अपने वचन से नहीं हटी । तब पार्वती को इतना प्रेम देखकर सप्तर्षी ने आपकी जय हो ऐसा कहा । वे पर्वतराज के पास गये और उन्हें उन्होंने पार्वती की कथा सुनायी । उसके बाद वे शिवजी के पास आये और उन्होंने पार्वती की पवित्र करनी सुनायी । तब शिवजी आनंदीत होकर रघुनाथजी का ध्यान करने लगे ।

इसी बीच तारक नामक असुर पैदा हुआ । उसने अपने बाहुबल से देवताओं को हराया । तब ब्रम्हाजी ने कहा कि उस दैत्य की मृत्यु तब होगी जब शिवजी के वीर्य से पुत्र उत्पन्न होगा । ब्रह्माजी ने कामदेव को शिवजी के पास भेजा । कामदेव का दुनिया में संचार होनेपर उसने सब के मन हर लिये । रघुनाथजी ने जिसकी रक्षा की है वे ही बच रहे । दो घडी ऐसा तमाशा हुआ । कामदेव ने शिव के पास जाकर अपना वातावरण निर्माण किया और शिवजी

की समाधि तोड दी। तब शिवजी ने अत्यन्त क्रोध में तीसरा नेत्र खोलकर कामदेव को भस्म कर दिया। तब कामदेव की पत्नी रति शिवजी के पास गयी और शिवजी ने रति से कहा कि काम बिना शरीर ही सब को व्यापेगा। और तेरा पति श्रीकृष्ण अवतार में उसका पुत्र प्रद्युम्न के रूप में उत्पन्न होगा।

देवताओं ने शिवजी को विवाह करने के लिए बिनती की। तब शिवजी तैय्यार हो गये। इधर सप्तर्षी हिमाचल के पास गये और उन्होंने कामदेव का सारा प्रकार बताया तब हिमाचल ने शुभघडी देख कर विवाह का दिन निश्चित कर लग्नपत्रिका उनको दे दी। ब्रह्माजी, सभी देवता बहुत ही खुश हुए और आकाश से फूलों की वर्षा होने लगी। देवता अपने वाहन लेकर विवाह को चले। शिवजी बैल पर बैठकर चल रहे हैं। शिवजी ने अपने भृंगी को भेजकर सब गणों को बुलवा लिया। हिमाचल ने सभी को आमंत्रित किया था। बारात नगर में आयी तब शिवजी की बारात देखकर सभी को दु:ख हो गया। तब पार्वती कहती है कि -

> करम लिखा जौं बाहर नाहू। तौ कत दोसु लगाइअ काहू।
> तुम्ह सन मिटहि कि बिधि के अंका। मातु व्यर्थ जनि लेहु कलंका ॥[30]

सभी शिवजी को देखकर दु:ख करने लगे। तब नारदजी ने पूर्व जन्म की कथा सुनाकर सब को समझाया तब सभी आनंदीत हो गये।

इस प्रकार दोनों का विवाह हुआ। आकाशसे फूलों की वर्षा होने लगी सभी ओर आनंदी-आनंद हो रहा था। जाते वक्त पार्वती सभी से आशिश ले रही है। आखिर माता का आशिर्वाद लेकर उनको बिदा किया। शिव-पार्वती दोनों कैलास चले गये। याज्ञवल्क्यजी कहते हैं -

" यह उमा संभु विवाहु ने नर-नारि कहहिं जे गाव ही ।
कल्यान काज बिबाहु मंगल सर्वदा सुख पावहीं ।।"[३१]

इसप्रकार याज्ञवल्क्यजी ने भरद्वाजी को शिवजी के रसीले और सहावने चरित्र सुनाकर आनंदीत किया ।

" संभु चरित सुनि सरस सुहावा । भरद्वाज मुनि अति सुख पावा ।।"[३२]

इसमें याज्ञवल्क्यजी ने पार्वती की तपस्या को महत्व देकर वेदपंथ का निरूपण किया है । वेदतत्व के ज्ञाता याज्ञवल्क्य से ऐसे ही समाधान की आशा थी । पार्वती गुरु के वचनों पर विश्वास करके तप पर आरूढ हुई । उसकी कठिन तपस्या ने राम को मीप्रमाविक किया । इसीलिए राम ने स्वयं प्रकट होकर शंकर को गिरिजा की करनी सविस्तार सुनाई ।

पार्वती के पवित्र कार्यों ने राम को इतना मोह लिया कि उन्हें शिव से पार्वती को पत्नी के रूप में ग्रहण करने के लिए प्रार्थना करनी पडी ।

इस संवाद में तुलसीदासजी याज्ञवल्क्यजी के द्वारा यह कहना चाहते हैं कि - विश्वास पूर्वक कर्म में प्रवृत्त होने के कारण ही सती को राम के अनन्य प्रेमी और राममक्त शिव की पत्नी बनने का स्थान प्राप्त हुआ । जिस कारण वह शिव के मुख से रामकथा सुनने की अधिकारिणी बनी थी । यह सब तपस्या के कारण ही संभव हो सका । इससे यह स्पष्ट है कि याज्ञवल्क्य के द्वारा तुलसीदास यह कहते हैं कि सदाचार युक्त तप ही श्रेष्ठ है । यह पार्वती के कठोर कर्म काही परिणाम है ।

सूर्य नारायण भट्ट के मतानुसार - " तुलसीदासजी ने इस संवाद में पार्वती और सती को दो विभिन्न युगों की स्त्रियों के प्रतीक रूप में चित्रित किया है ।"[३३] सती इस युग का प्रतीक है कि जब नारी का स्थान समाज में

प्रधान था। उस वक्त मनुष्य को नारी की इच्छा का दमन करने का अधिकार नहीं था। तुलसीदासजी पुरुषों से अधिक स्वतंत्रता का परिणाम क्या हुआ यह हमने देखा ही है। इसी परिवर्तन के समर्थक तुलसीदासजी ही है वे यह चाहते थे कि पुरुष और स्त्री दोनों पर बन्धन समान रूप से होने चाहिए। इसलिए उन्होंने पार्वती और सीता को सामन्ती युग की प्रतीक के रूप में चित्रित किया है।

तुलसीदासजी ने राम की परीक्षा लेने के लिए गई सती सीता का बहाना बनाती है तब शिवजी उसका स्वीकार नहीं करते क्योंकि परायी स्त्री बनने के कारण फिर से उसे पत्नी के रूप में ग्रहण करना बहुविवाह के समान होगा इसलिए तुलसीदासजी ने बहुविवाह का विरोध किया है। शिवजी द्वारा अग्निप्रवेश के बाद पार्वती के रूप में स्वीकारा है। इसप्रकार हिंदू-समाज में आज तक यही पार्वती गौरी के रूप में हर मंगल कार्य में पूजी जाती है। वह पति-परायण सामन्ती युग की नारी का प्रतीक है।

इस संवाद को देखने पर हमें ऐसा लगता है कि क्या तुलसीदासजी के हृदय में नारी की इस दु:खद पराधीनता पर चीत्कार नहीं है - चीत्कार है वे नारी की इस स्थितिपर दु:खी होते हैं इसलिए मैना पार्वती को शिवजी के साथ भेजती हुयी कहती है -

" कत विधि सृजी नारि जग माही। पराधीन सपनेहु सुख नाही। "[३४]

तुलसीदासजी को नारी की स्वतंत्रता समाज-प्रगति के लिए बाधक लगती है। क्योंकि उसके कारण नैतिक मर्यादा का उल्लंघन होता है और मानव जीवन का एकमात्र उद्देश्य कामवासनाओं की पूर्ति बन जाता है। इसलिए तुलसीदासजी ने शिवद्वारा समाज में स्वतंत्र रूप से विचरण करनेवाले कामदेव को जलाया। लेकिन उसे मर्यादा में रहकर संसार की निर्मिती के लिए रहने की आज्ञा दी।

यह तभी संभव है जब नारी पतिव्रता हो । इसप्रकार तुलसीदासजी नारी का पतिव्रता होना समाज की विवेकपूर्ण प्रगति के लिए आवश्यक मानते हैं ।

गोस्वामी तुलसीदासजी ने याज्ञवल्क्य के द्वारा इस संभाषण में राम की प्रभुता का गुनगान किया है और शिव-उमा संवाद को विषाद-नाशक बताया है । और उसके द्वारा ईश्वर को पाने की इच्छा को प्रबल बनाकर उसकी घोषणा की है । इसके साथ-साथ रामभक्ति को सबसे कल्याणकारी बताया है ।

इसप्रकार याज्ञवल्क्यजी के द्वारा तुलसीदासजी यह कहना चाहते हैं कि रामभक्ति सबसे श्रेष्ठ उपाय है जो हमें अच्छे कर्म करने को सिखाती है । इस संवाद में ईश्वर को पाने की इच्छा के सभी कथन कर्म पर आधारीत हैं यह बताया है । यहाँ भरद्वाजजी का संशय सत्य नहीं है वह संशय के स्थान पर राम के प्रति होनेवाली अखंड श्रध्दा और विश्वास है ।

इस संवाद में भरद्वाजजी का संदेह वास्तविक नहीं है । वह जिज्ञासा की भावना से उत्पन्न हुआ है । तुलसीदासजी का उद्देश्य भी यह नहीं था कि भरद्वाज को संशयशील व्यक्ति के रूप में प्रस्तुत करें । इसलिए कि रामकथा सुनने के लिए कोई बहाना चाहिए था । अत: भरद्वाज ने अपनी इच्छा को ही अपने संशयात्मक प्रश्नों के रूप में याज्ञवल्क्य के सामने रख दिया है । यहाँ दोनों मुनि हैं, दोनों समान कोटि के हैं, छोटे बडे का कोई भेद नहीं हैं । सत्संग के लिए सन्देह को साधन बना लिया हैं ।

इसप्रकार ` मानस ` का यह संभाषण कर्मकाण्ड का घाट है, जिस पर उतरकर रामचरितरूपी मानस के मधुर जल का आस्वाद लिया जाता है ।

निष्कर्ष :

तुलसीदासजी ने याज्ञवल्क्य और भरद्वाज संभाषण में भरद्वाज संदेह के प्रसंग को उठाकर वेदतत्व के ज्ञाता याज्ञवल्क्यजी द्वारा भरद्वाज के संदेह का समाधान करने के लिए उन्हें राम के प्रति अटल विश्वास और श्रध्दा रखने के लिए कहा है । वैसे ही पुरुषों से अधिक स्वतंत्रता स्त्री को देने के विरोध में उन्होंने सती के प्रसंग को प्रस्तुत किया है । तुलसीदासजी स्त्री-पुरुष दोनों को समान स्वतंत्रता देना चाहते हैं । उन्होंने नारी का पतिव्रता होना समाज की प्रगति के लिए आवश्यक माना है । उसीप्रकार सामन्ती युग में उन्होंने शिवद्वारा सीता रूप लेनेवाली सती को पत्नी के रूप में अस्वीकार करके बहुविवाह का विरोध किया है और यह सब कर्म पर आधारीत है,। यह बताया है । अच्छे कर्म का परिणाम अच्छा होता हैं और बुरे कर्म का परिणाम बुरा होता है । कर्म के लिए भक्ति की आवश्यकता है । इसलिए याज्ञवल्क्यजी द्वारा तुलसीदासजी भरद्वाज को राम की भक्ति की महिमा सुनाते हुए यह कहते हैं कि भक्तिमयी कर्म-साधना से संपूर्ण समाज संगठित होकर प्रेम की शीतल छाया में निवास कर सकता है ।

संदर्भ - सूची

१. ` रामचरितमानस `
हनुमान प्रसाद पोद्दार, १। ३५, २.३
गीता प्रेस गोरखपूर
४३ वा संस्करण, संवत २०४१

२. गोसाईं तुलसीदास
विश्वनाथ प्रसाद मिश्र
वाणी वितान प्रकाशन, ब्रह्मनाल,वाराणसी, पृ. ९१.

३. वही,
पृ. ८१.

४. रामचरितमानस
हनुमान प्रसाद पोद्दार, १ । ७
गीता प्रेस गोरखपूर
४३ वा संस्करण, संवत २०४१

५. वही
१। २९, २.३
१।३० क

६. रामचरितमानस का काव्यशास्त्रीय अनुशीलन
डॉ. राजकुमार पाण्डेय
अनुसन्धान प्रकाशन, आचार्य नगर, कानपूर,
पृ. ४१५

७. रामचरितमानस
हनुमानप्रसाद पोद्दार, १। ४७
गीता प्रेस, गोसरपूर
४३ वा संस्करण, संवत २०४१

८. वही
१। १२० ख

९. वही
१। ३६

१०. तुलसी काव्य - नये पुराने संदर्भ
डॉ. राम बाबु शर्मा
वाणी प्रकाशन, दिल्ली
प्रथम संस्करण, १९८४, पृ. १८

११. मानस मंथन
डॉ. स्वामीनाथ शर्मा,
आशुतोष प्रकाशन, चेतगंज, वाराणसी, पृ. ५४

१२. गोसाईं तुलसीदास
विश्वनाथ प्रसाद मिश्र
वाणी वितान प्रकाशन, वाराणसी, प्रथम संस्करण, पृ. ८२

१३. रामचरित मानस
हनुमान प्रसाद पोद्दार, १।१७५
गीता प्रेस, गोरखपुर
४३ वा संस्करण, सं. २०१४

१४. वही
३.३८

१५. वही
६।११३

१६. वही
७।४०,२

१७. मानस मंथन
डॉ. स्वामीनाथ शर्मा
आशुतोष प्रकाशन, चेतगंज, वाराणसी, पृ. ५४

१८. मानस स मंथन
डॉ. स्वामीनाथ शर्मा
आशुतोष प्रकाशन, चेतगंज, वाराणसी, पृ.

१९. रामचरितमानस
हनुमान प्रसाद पोद्दार, १।१०४,४
गीता प्रेस, गोखरपुर,
४३ वा संस्करण, सं. २०१४

२०. वही
७।५६,१

२१. वही
१। ४३,४

२२. रामचरितमानस साहित्यिक मूल्यांकन
डॉ. सुधाकर पाण्डेय
राधाकृष्ण प्रकाशन
पृ. ४२

२३. मानस मंथन
डॉ. स्वामीनाथ शर्मा,
आशुतोष प्रकाशन, चेतगंज, वाराणसी,
पृ . ६४

२४. तुलसी काव्य चिंतन
डॉ. अम्बा प्रसाद सुमन
ग्रंथायन सर्वोदय नगर, सासनी गेट, अलीगढ
प्रथम संस्करण, १९८२, पृ. ४६

२५. रामचरितमानस
हनुमान प्रसाद पोद्दार, १। ४६, १,२
गीता प्रेस, गोरखपुर, ४३ वा संस्करण, सं. २०४१

२६. वही
१। ४९

२७. वही
१-५० ख

२८. वही
१। ७९, ३

२९. वही

३०. वही
१। ९६,४

३१. वही
१। १०२,५

३२. वही
१।७५,४

३३. तुलसी और मानवता
सूर्य नारायण मट्ट
ऊर्जा प्रकाशन, ६९ नया बैरहना, इलाहाबाद
द्वीतीय संस्करण, १९८७
पृ. २०६

३४. रामचरितमानस
हनुमान प्रसाद पोद्दार, १।१०१,३
गीता प्रेस, गोरखपूर
४३ वा संस्करण, सं. २०४१